भारतीय इतिहास का लेखन और शिक्षण–ब्रिटिश काल से आज तक

डॉ. लक्ष्मी नारायण*

सारांश

भारतीय इतिहास का क्रमबद्ध लेखन ब्रिटिश काल में हुआ। अपने साम्राज्य को मजबूत करने के लिए उनमें भारतीय इतिहास को जानने की इच्छा जागृत हुई। भारत के इतिहास का लेखन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ ही शुरू हो गया था। उस समय के अनेक युरोपियन विद्वानों ने जिनमें प्रमुख रूप से सर विलियम जोन्स, कालब्रुक, जार्ज टर्नर, जेम्स प्रिसेप, पार्जिटर, मैक्समूलर आदि हैं, ने आरंभिक भारतीय इतिहास का लेखन किया।भारतीय इतिहास लेखन के लिए जो सामग्री उन्होंने इकट्ठी की उसमें उन्हें साम्राज्यवाद को पुश्ट करने वाली सामग्री बहुत कम मिली। अतः उन्होंने बहुत सी सामग्रियों को अप्रमाणिक करार दे दिया। बाद में उन्होंने भारत का इतिहास लिखने की दृश्टि से स्व–विवेक के आधार पर विभिन्न निश्कर्श निर्धारित किए और विदेशी साहित्य पर आधारित मानदण्ड स्थापित किए।यदि इतिहास घटनाओं को विकृत करके किसी भी व्यक्ति, मॉडल या विचारधारा से प्रतिबद्ध होकर लिखा जाता है, तब वह इतिहास नहीं रह जाता। उन्होंने भारत के गौरवशाली इतिहास को विकृत किया जिससे की भावी पीढ़ियों कोकोई प्रेरणा ना मिले। आज जो इतिहास पढ़ाया जा रहा है उससे हमें ना तो कोई प्रेरणा मिलती है और ना ही कोई मार्गदर्शन। ऐसा दिखाया गया है कि अपना देश कभी कुछ रहा ही नहीं बल्कि आक्रांताओं का देश रहा है।

प्रस्तावना

इतिहास राष्ट्र का प्राण है। राष्ट्रात्मा का ज्ञान और राष्ट्रशरीर का कर्म उसी पर निर्भर है। यह सभ्यता का आधार और संस्कृति का प्रधान अंग है। भविश्य के निर्माण में उसका अनिवार्य सहयोग रहा करता है। यदि इसकी उपेक्षा की गई अथवा अवहेलना हुई तो राष्ट्र का पतन अवश्यम्भावी हो जाता है। यह समझते हुए जब तक राष्ट्र अपने इतिहास का चिंतन करता है, उससे प्रेरणा ग्रहण करता है, उसकी प्रगती में बाधा नहीं पड़ती। अभ्युदय के पथ पर बढ़ता जाता है। उसे भूलाकर वह अपनी राश्ट्रीयता के आधार स्तंभ को ही खो बैठता है। सभी राष्ट्र इस तथ्य को भली–भाँति समझते हैं और अपने–अपने इतिहास के सहारे प्रगति करते हुए आचरण के द्वारा इतिहास प्रेम को प्रमाणित करने में प्रयत्नशील हैं। ऐसी स्थिति में पराधिनता के बंधन से मुक्त हो जाने के अनन्तर आज हमारा भी कर्तव्य है कि हम अपने इतिहास का अध्ययन करें, उससे प्रेम करें और भूतकाल की भव्य वेदी पर सुखद भविष्य का निर्माण करें। अतीत की ओर दृश्टि ले जाते ही हमें यह देखकर प्रसन्नता होती है कि हमारे पूवजों ने सदा इतिहास का आदर किया। इतिहास को उन्होंने राष्ट्र साहित्य का अंग माना। अपौरुशेय वेदवाणी के साथ उन्होंने आदिकाल में उसके स्वरूप का श्रवण किया। विश्व की अष्टादश विद्याओं में एक विद्या के रूप में उन्होंने उसकी गणना की और समाजसुधारक धर्म के चतुर्दश सिंहासनों में से एक पर उसको स्थापित किया।

समस्त आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्पशुद्धियों के आधार पर पुराणार्थ–विशारद ने संहिता का सम्पादन किया। यही संहिता आज पुराण साहित्य के रूप में प्राप्त है। इसके अतिरिक्त अनेक ग्रंथों की रचना भी समय–समय पर होती रही। किंतु इन ग्रंथों की शुश्क एतिहासिकता और परलोक की बढ़ती हुई चिंता के कारण इनकी उपेक्षा हुई। दूसरी तरफ विदेशी आक्रमणकारियों के द्वारा किए गए भीषण साहित्य विनाश के परिणामस्वरूप ये ग्रंथ सुरक्षित नहीं रह सके। आज क्रमबद्ध इतिहास की बहुत सी कड़िया लुप्त हो गयी हैं। फिर भी हमारे वेदों सहित विशाल संस्कृत साहित्य में तथा प्रान्तिय साहित्य में भी अपने इतिहास की घटनाएँ मिलती हैं। उनमें जितना भी साहित्य काल के गाल में जाने से बच रहा है वह भी बहुत से अंशों की पूर्ती कर रहा है।

*प्रवक्ता इतिहास, रा.मॉ.स.व.मा.विद्यालय, ततारपुर इस्तमुरार, रेवाड़ी (हरियाणा)

परन्तु पाश्चात्य इतिहासकारों और उनके अनुयायियों के द्वार लिखे गये इतिहास–ग्रंथों का जब हम अध्ययन करते हैं तो इन इतिहासकारों का कहना है कि 'प्राचीन भारतीयों में ऐतिहासिक ज्ञान का सर्वथा अभाव रहा है।' आश्चर्य तो जब होता है जब अपने ही देश के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू जी अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि 'युनानी, चीनी और अरबों के समान भूतकाल में भारतीय ऐतिहासिक न थे।' एक बात यहां यह भी स्पष्ट होती है कि पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित अधिकतम लेखक यही मानते हैं।

भारत के आधुनिक इतिहास का लेखन ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ ही शुरू हो गया है। उस समय अनेक युरोपियन विद्वान भारत आये। उनमें प्रमुख रूप से सर विलियम जोन्स, कालब्रुक, जार्ज टर्नर, जेम्स प्रिसेप, पार्जिटर आदि हैं। गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग के समय कलकत्ता उच्च न्यायालय में कार्यरत तत्कालीन न्यायाधीश सर विलियम जोन्स ने किया। उन्होंने भारत के इतिहास को आधुनिक रूप से लिखने के लिए नए ढंग से शोधकार्य करने का सिलसिला शुरू किया। 1757ई. में हुए प्लासी के युद्ध के परिणामों से प्रेरित होकर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत पर राज करने का एक सपना सजाया। इस संदर्भ में मैकाले ने अपने मित्र राउस को एक पत्र में लिखा कि 'अब केवल नाम मात्र का नहीं, हमें सचमुच में नवाब बनना है और वह भी कोई पर्दा रखकर नहीं, खुल्लमखुल्ला बनना है।'इस सपने को सार्थक करने के लिए अनेक प्रकार के प्रयास किए गये। उन्हीं प्रयासों में एक प्रयास था भारत के इतिहास का लेखन।

इतिहास लेखन के लिए अंग्रेज इतिहासकारों ने सघन प्रयास किए । उन्होंने भारत की प्राचीन सामग्री, यथा ग्रंथ, शिलालेख आदि, जिसे पराधीन रहने के कारण भारतीय भूल चुके थे उन्हें खोजा। विदेशी यात्रियों के वृतांतों को इकट्ठा किया। इन सब का अनुवाद करवाने के लिए लिपियों के जानकारों को ढूँढ़ा और उनसे मदद लेकर इन सभी का अपनी भाषा अंग्रेजी में अनुवाद करवाया और फिर बड़ी बारिकी से गहराई में जाकर इनका अध्ययन किया। उन्होंने पाया की इसमें हमारे साम्राज्यवाद को पुष्ट करने वाली सामग्री बहुत कम है। अतः इन्होंने बहुत सी सामग्रियों को अप्रमाणिक करार दे दिया। बाद में उन्होंने भारत का इतिहास लिखने की दृष्टि से स्व–विवेक के आधार पर विभिन्न निष्कर्ष निर्धारित किए और विदेशी साहित्य पर आधारित मानदण्ड स्थापित किए।

अंग्रेज इतिहासकारों व विद्वानों ने इतिहास लिखने से पूर्व भारतीय इतिहास के संदर्भ में अनेक मनघड़न्त निष्कर्ष निर्धारित किए और सत्ता के बल पर उनको बड़े ही जोरदार ढंग से प्रचारित करवाया। उनका कतिपय उल्लेखनीय निष्कर्ष निम्न रूप में रहे –

1. प्राचीन भारतीय विद्वानों को इतिहास के वास्तविक स्वरूप की सही संकल्पना कभी नहीं रही। उनमें ऐतिहासिक लेखन की क्षमता का अभाव रहा।
2. भारत में विशुद्ध ऐतिहासिक अध्ययन के लिए सामग्री बहुत कम मात्रा में सुलभ रही है।
3. इतिहास लिखने के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और आवश्यक तत्त्व–तिथिक्रम अर्थात कालगणना की भारत के प्राचीन विद्वानों के पास कोई निश्चित और ठोस विधा कभी नहीं रही।
4. भारत के इतिहास की अधिक सही तिथियां वे हैं जो भारत से नहीं विदेशों से मिली हैं।
5. भारत के इतिहास की प्राचीनतम सीमा 2500–3000 ईसा पूर्व तक ही रही है।
6. आर्यों ने भारत से बाहर से आकर यहां के पूर्व निवासियों को युद्धों में हराकर अपना राज्य स्थापित किया और हारे हुए लोगों को दास बनाया।
7. प्राचीन भारतीय पौराणिक साहित्य में वर्णित राजवंशावलियां तथा राजाओं की शासन अवधियां अतिरंजित होने से अप्रामाणिक और अविश्वसनीय हैं।
8. रामायण, महाभारत तथा अन्य प्राचीन ग्रंथ 'मिथ' हैं।
9. भारत का शासन समग्र रूप से एक केन्द्रीय सत्ता के अधीन अंग्रेजी शासन के आने पूर्व कभी नहीं रहा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने भारत के समस्त प्राचीन साहित्य को तो नकार ही दिया, साथ ही भारतीय पुराणों, धार्मिक ग्रंथों और प्राचीन वाङ्मय में सुलभ सभी एतिहासिक तथ्यों और कथ्यों को भी अप्रामाणिक और अविश्वसनीय करार दे दिया।

इस क्षेत्र में प्रारंभिक प्रयास करने वाले कलकत्ता उच्च न्यायालय के तत्कालीन न्यायाधीश सर विलियम जोन्स ने लेखन कार्य करने से पहले तीन प्रमुख मानदण्ड निर्धारित किए।

1. **आधार तिथि** – भारत पर सिकन्दर के आक्रमण के समय अर्थात 327–328 ई.पू. में चन्द्रगुप्त विद्यमान था और उसके राज्यारोहण की तिथि 320 ई.पू. थी। इसी तिथि को आधार तिथि मानकर भारत के सम्पूर्ण प्राचीन इतिहास के तिथिक्रम की गणना की जाए क्योंकि इससे पूर्व की ऐसी कोई भी तिथि नहीं मिलती जिसे भारत का इतिहास लिखने के लिए आधार तिथि बनाया जा सके।
2. **सम्राट का नाम** – युनानी लेखकों द्वारा वर्णित सेंड्रोकोट्टस ही चन्द्रगुप्त मौर्य था और सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात वही भारत का सम्राट बना था।
3. **राजधानी का नाम** – युनानी लेखकों द्वारा वर्णित पालीबोथ्रा ही पाटलीपुत्र था और यही नगर चन्द्रगुप्त मौर्य की राजधानी था।

उक्त निष्कर्षों और मानदण्डों को आधार बनाकर तत्कालीन सत्ता ने आधुनिक रूप में भारत का इतिहास–लेखन करवाया। पाश्चात्य विद्वानों का यह प्रयास इसलिए तो प्रशंसनीय रहा कि विगत एक हजार वर्षों से अधिक कालखण्ड में इस दिशा में स्वयं भारतवासियों द्वारा 'राजतरंगिणी' को छोड़कर कोई भी उल्लेखनीय कार्य नहीं किया गया था किंतु इतने परिश्रम के बाद भारत का जो इतिहास उन्होने तैयार किया, उसमें भारत के एतिहासिक घटनाक्रम और तिथिक्रम को इस ढंग से प्रस्तुत किया गया कि आज अनेक भारतीय विद्वानों के लिए उसकी वास्तविकता सन्देहास्पद बन गई। पाश्चात्य विद्वानों ने ब्रिटिश काल के 250 वर्षों के लेखन में इतना इतिहास नहीं बिगाड़ा जितना की पिछले 70 वर्षों में पाश्चात्योन्मुखी भारतीय इतिहासकारों ने बिगाड़ डाला। इतिहासकार सत्य का उद्घाटक होता है। वह घटनाओं को शुद्ध व संतुलित बुद्धि से चिन्तन करके बिना किसी पूर्वाग्रह से ग्रसित हुए लिखता है। यदि वह घटनाओं को विकृत करके किसी भी व्यक्ति, मॉडल या विचारधारा से प्रतिबद्ध होकर लिखता है, तब वह इतिहास नहीं रह जाता।

यदि हम यह जानने का प्रयास करें की हमें इतिहास क्यों पढ़ना चाहिए? इसकी क्या आवश्यकता है? तो ध्यान आता है कि इतिहास किसी देश अथवा जाति की विभिन्न परम्पराओं, मान्यताओं तथा महापुरुषों की गौरव गाथाओं और संघर्षों के उस सामुहिक लेखे–जोखे को कहा जाता है जिससे उस देश अथवा जाति की भावी पीढी प्रेरणा ले सके। परंतु आज भारत का इतिहास क्या इन अर्थों में खरा उतरता है? यह विचार करने पर हमें निराशा ही हाथ लगती है। क्योंकि आज जो इतिहास हमें उपलब्ध है उससे हमें वह प्रेरणा नहीं मिलती जिससे की भावी पीढ़ी का कोई मार्ग–दर्शन हो सके। उससे तो मात्र यह जानकारी मिलती है कि इस देश का अपना कभी कुछ रहा ही नहीं। यह तो केवल आक्रांताओं का देश रहा है। एक के बाद एक आक्रांता आते रहे और पिछले आक्रांताओं को पददलित करके अपना वर्चस्व स्थापित करते रहे। यह देश, देश नहीं मात्र एक धर्मशाला रही है, जिसमें जिसका भी और जब भी जी चाहा, घुस आया और कब्जा जमा कर मालिक बन कर बैठ गया।

अंग्रेजो ने भारत का इतिहास हमारे ज्ञान वर्धन के लिए नहीं वरन अपने विशेश उद्देश्य की पूर्ति हेतू लिखवाया था। भारत पर अपने कब्जे को स्थाई बनाने के लिए उन्हें यह तरिका सबसे आसान लगा कि इस देश का इतिहास, भाषा और धर्म बदल दिया जाए। उनका यह दृढ विश्वास था कि संस्कृति के बदले हुए परिवेश में जन्में, पले और शिक्षित भारतीय कभी भी अपने देश और अपनी संस्कृति की गौरव–गरीमा के प्रति इतने निष्ठावान, अपनी सभ्यता की प्राचीनता के प्रति इतने आस्थावान और अपने साहित्य की श्रेष्ठता के प्रति इतने आश्वस्त नहीं रह सकेंगे। इसलिए उन्होंने भारत के इतिहास के हर अंग को ही विकृत कर डाला चाहे वो घटनाएँ हों, चाहे नाम और तिथियाँ हों। इस कार्य के कार्यान्वयन के लिए व्यापक स्तर पर प्रबंध किए गये। इस योजना के अन्तर्गत पाश्चात्य चिंतकों और वैज्ञानिकों ने, अंग्रेज प्रशासकों और ईसाई धर्म प्रचारकों ने भारत की प्राचीनता, व्यापकता, अविच्छिन्नता और एकात्मता को ही नहीं, समाज में ब्राह्मणों यानी विद्वानों के महत्त्व और प्रतिष्ठा को नष्ट करने के उद्देश्य से एक व्यापक और सम्मिलित अभियान चलाया। रामायण,

महाभारत जैसे प्राचीन ग्रंथों की घटनाओं को कपोल–कल्पित माना। यह सिद्ध करने पर जोर दिया कि वाल्मीकि और व्यास जैसे ऐतिहासिक पुरुश कभी अस्तित्व में रहे ही नहीं। प्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा है कि, “The policy inaugurated by Macaulay, with all ite cultural value, is loaded on one side. While it is so careful as not to make us forget the force and validity of western culture, it has not helped us to love own culture and refine it where necessary. In some cases, Macaulay's wish is fulfilled and we have educated Indians who are 'more English than English themselves'.........They look upon India's cutural evolution as one dreary scene of discord, folly and superstition. They are eagre to imitate the material achievements of Western States and tear up the roots of ancient civilisation, so as to make room for the novelities imported from the West. One their members recently declared that if India is to thrive and flourish, England must be her 'spiritual mother' and Greece her 'spiritual grand mother'”

लार्ड टी.वी. मैकाले जो 1834ई. में भारत की शिक्षा प्रमुख बने और उन्होंने जो शिक्षा नीति चलाई उसके परिणाम आज हमारे सामने हैं। उन्होंने अपने पिता को लिखा, ”मेरी बनाई शिक्षा पद्धति से यहां यदि यही शिक्षाक्रम चलता रहा तो आगामी 30 वर्षों में एक भी आस्थावान हिन्दू नहीं बचेगा या तो वे ईसाई बन जाएंगे या नाममात्र के हिन्दू बने रहेंगें। धर्म पर या वेद–शास्त्रों पर उनका विश्वास नहीं होगाा। स्पष्ट रूप से हिन्दूधर्म में हस्तक्षेप न करते हुए भी, बाह्य रूप से उसकी धार्मिक स्वतंत्रता कायम रखते हुए भी हमारा उद्दिष्ट सफल होगा।“

फ्रडरिक मैक्समूलर जिसने भारतीय ग्रंथों का अनुवाद किया, उनके विचार किस प्रकार के थे यह भी हम उनके पत्रों से जान सकते हैं। ये पत्र उनकी पत्नी ने 1902ई. में छपवाए थे। एक पत्र का कुछ अंश जो उन्होंने अपनी पत्नी को लिखा था, ”वेद का अनुवाद और मेरा यह संस्करण उत्तर काल में भारत के भाग्य पर दूर तक प्रभाव डालेगा। यह उनके धर्म का मूल है और मैं निश्चय से अनुभव करता हूँ कि उन्हें यह दिखाना कि मूल कैसा है, गत तीन सहस्त्र वर्ष में उससे उपजी सब बातों को उखाड़ने का एक मात्र उपाय है।“ वहीं एक और उद्धरण स्पष्ट करता है कि, “When the walls of the mighty fortress of Brahmanism are encircled, undermined and finally stormed by the soldiers of the cross, the victory of christianity must be signal and complete.”

वहीं इग्लैंड के प्रधानमंत्री लार्ड़ पामर्स्टन की एक 1859 की घोषणा मिलती है, ”यह हमारा कर्त्तव्य ही नहीं, अपितु हमारा अपना हित भी इसी में है कि भारत भर में ईसाइयत का प्रचार हो।“

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के अध्यक्ष मिस्ट्र मेंगल्स का इंग्लैण्ड की पार्लियामेंट में दिये गये एक भाषण का भी उद्धरण मिलता है जो ब्रिटिश मानसिकता को स्पष्ट करती है, ”विधाता ने हिन्दुस्तान का विशाल साम्राज्य इंग्लैण्ड के हाथों में इसलिए सौंपा है कि ईसामसीह का झण्डा इस देश में एक कोने से दूसरे कोने तक लहराए। प्रत्येक ईसाई का कर्तव्य है कि समस्त भारतीयों को अविलम्ब ईसाई बनाने के महान कार्य में जुट जाएं“

इस तरह उपरोक्त कथनों से यह स्पष्ट होता है कि अंग्रेज किस तरह का भारत बनाना चाहते थे। इन उद्देश्यों की पूर्ती के लिए उन्होंने भारतीय इतिहास को तोड़ने–मरोड़ने के लिए अनथक प्रयास किए। आज भी पाश्चात्य लेखक इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार नहीं करते। परंतु एडवर्ड थौमसन नाम का एक अंग्रेज इतिहासकार इसे बड़े ही स्पष्ट शब्दों में कहता है, ”हमारे इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास को एक विशेश दृष्टिकोण प्रदान किया है। उस दृष्टिकोण को बदलने के लिए जो सहासपूर्ण एवं सशक्त समीक्षाशक्ति अपेक्षित है, वह भारतीय इतिहासकार अभी बहुत समय तक नहीं दे सकेंगे।“

मुस्लिम आक्रांताओं ने भारत के ग्रंथालयों को कुफ्र की पुस्तके बता कर नष्ट किया और बाद में उन्होंने जो नीति अपनाई वह भी भारतीय लेखन परंपरा के विपरित थी। इस तरह से भारत का इतिहास नष्ट हुआ। जब पाश्चात्य विद्वानों में जिनमें ज्यादातर जर्मनी और इंग्लैण्ड के लेखक थे। इस श्रेणी में जर्मनी के लेखकों में प्रमुख रूप से फ्रैडरिक मैक्समूलर, रुडाल्फ राथ, अल्वर्ट वेबर, एम. विंटर्निट्स, फ्लीट, ए.स्अेन आदि थे। वहीं

इंग्लैण्ड के विलियम जोन्स, मैकाले, मिल, मैलकम, विल्फोर्ड, वेंटले, विल्सन, एल्फिन्सटन, कीथ, मैक्डानल आदि अधिक रूप से उल्लेखनीय हैं। इन सभी लेखकों ने अपने–अपने ढंग से भारत के इतिहास, संस्कृति और साहित्य को बिगाड़ने का प्रयास किया। इन इतिहासकारों ने भारत के तर्कों को कुतर्कों में, ज्ञान का अज्ञान में, सत्य का असत्य में, प्रमाणों को कुप्रमाणों में बदल दिया और हर प्रकार से सब के मन में यह बैठाने का प्रयास किया कि प्राचीन काल में भारत में कुछ भी नहीं था। यहां के निवासी परस्पर लड़ते–झगड़ते रहते थे और वे ज्ञान–विज्ञान विहीन थे। कुछ अन्य लेखकों के नाम भी आते हैं जिनमें प्रिंसेप, जेम्स लीगे, डॉ. यूले, लॉसन, मैकालिफ आदि थे। इन लेखकों ने भारतीय इतिहास के क्षेत्र में घुसपेठ करके अधिक से अधिक भ्रष्ट करके उसे अप्रमाणिक, अविश्वसनीय, अतिरंजित और कल्पित इतिहास की कोटी में डालने का प्रयास किया।

पाश्चात्य विद्वानों व इतिहासज्ञों ने अपने इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भारतीय मूल पाठों में, कहीं अक्षरों में, कहीं शब्दों में और कहीं–कहीं वाक्यावली में अपनी मनमर्जी से परिवर्तन किए और करवाए। इन्होंने इतने से ही काम नहीं चलाया बल्कि वाक्यावली में परिवर्तन के साथ–साथ कहीं–कहीं प्रक्षिप्त अंश जोड़ दिए गए तो कहीं–कहीं मूल अंश लुप्त भी कर दिए गए।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह विशेषता केवल भारत की ही रही है कि सदियों तक एक के बाद दूसरे युद्धों में लगे रहने और सैकड़ों वर्षों तक निरन्तर पराधीन बने रहने पर भी वह ने केवल अपने प्राचीन साहित्य के महत्त्व को ही वरन अपनी पुरातन संस्कृति, सभ्यता, रीति–रिवाज, रहन–सहन और धर्म के स्वरूप को भी बहुत कुछ उसी रूप में अक्षुण बनाऐ रखने में समर्थ रह सका, जिसमें वे अत्यंत प्राचीन काल में रहे हैं। जबकी अन्य अनेक देश ऐसा नहीं कर सके। चीन, मिस्त्र, युनान, रोम आदि देश, जहां कभी विश्व प्रसिद्ध सभ्यताएं जन्मी, उभरी और विकसित हुई, कालान्तर में अपनी संस्कृति, साहित्य, सभ्यता आदि को विस्मृति के अंधकार में विलीन हो जाने से रोक नहीं सके। आज इन देशों में जो कुछ भी है वह सब कुछ नया ही है। जबकी भारत में वेद, शास्त्र, रामायण, महाभारत, गीता आदि प्राचीन ग्रंथों का आज भी वही महत्त्व है, उनके तथ्यों की वही मान्यता है और उनके कथ्यों का वही सम्मान है, जो आज से हजारों–हजारों वर्ष पूर्व रहा है।

कहने का अभिप्राय यह है कि भारत में अंग्रेजी सत्ता से जुड़े पाश्चात्य विद्वानों ने भारत के इतिहास को आधुनिक रूप में लिखे जाने से पूर्व के स्वनिर्धारित निष्कर्षों को सही सिद्ध करने के लिए भारतीय सहित्य, मान्यता, परम्परा, इतिहास आदि में चाहे कुछ भी बदल क्यों न करनी पड़ी हो, वह निर्द्वंद होकर, निःसंकोच भाव से और बड़ी निर्ममता से कर डाली क्योंकि वे उस समय देश के शासक थे। भारत के इतिहास व साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने जो विकृतियाँ की हैं उनके अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। कुछ उदाहरण यहां हम देख सकते हैं–

अक्षर परिवर्तन – विष्णु पुराण में मौर्य वंश का राज्यकाल 337 वर्श दिया गया था किंतु संबंधित श्लोक 'त्र्यब्दशतंसप्तत्रिंशदुत्तरम्' में त्रय को बदल कर 'अ' अक्षर करके अर्थात 'त्र्यब्द' को 'अब्द' बनाकर 300 की जगह 100 करके वह काल 137 वर्ष का करवा दिया गया। आज के अधिकतर विद्वान 137 वर्ष को ही सही मानते हैं किंतु कलिंग नरेश खारबेल के 'हाथी गुम्फा' अभिलेख में मौर्य वंश के संदर्भ में '165वें वर्ष' का स्पष्ट उल्लेख होने से मौर्य वंश के राज्यकाल को 137 वर्षे में समेटना कठिन है। विशशकर उस स्थिति में जबकि 'हाथी गुम्फा' अभिलेख ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक माना जा चुका है। 'मत्स्य पुराण' व 'एइहोल अभिलेख' आदि में भी ऐसा ही किया गया है।

शब्द परिवर्तन – पंचसिद्धान्तिका में एक पद मूल रूप में इस प्रकार है–

सप्तश्विवेद संख्यं शककालमपास्य चैत्रशुक्लादौ।
अर्धास्तमिते भानौ यवनपुरे सौम्यदिवसाद्य।।

अर्थात 424 शक काल के चैत्र मास की शुक्ल प्रतिपदा को सौम्य दिवस अर्थात सोम का पुत्र बुध–बुधवार था, जबकि यवनपुर में अर्द्ध सुर्यास्त हो रहा था। उक्त पद में यद्यपि स्पष्ट रूप से सौम्य अर्थात सोम के पुत्र 'बुध' का उल्लेख है किंतु गणना करने पर जब ज्ञान हुआ कि इस तिथि को बुधवार नहीं वरन मंगलवार था तो कतिपय विद्वानों ने मूल पाठ में परिवर्तन करके 'सौम्य' को 'भौम' बनाकर काम चलाया। 'भौम' का अर्थ भूमी का पुत्र मंगल होता है। किंतु ऐसा करना ठीक नहीं

रहा क्योंकि उक्त पद में उल्लेखित शक काल वर्तमान में प्रचलित शालिवाहन शक का वाचक नहीं है। वस्तुतः वह विक्रम पूर्व आरंभ हुए शक सम्वत का वाचक है। इन दो शक कालों में यथास्थान सही अंतर न करने से बहुत सी घटनाओं के 500 से अधिक पीछे हो जाने पर कालगणना में भ्रम पैदा हो गया है। ऐसे ही परिवर्तन 'चान्द्रव्याकरण' व खारवेल के हाथी गुम्फा अभिलेख आदि में भी किए गए हैं।

अर्थ परिवर्तन – अलबेरूनी का यात्रा वृतांत में गुप्त सम्वत के प्रारंभ होने के काल का उल्लेख करते हुए लिखा है कि गुप्त शासकों के सामाप्त हो जाने पर 241 शक में उनकी स्मृति में गुप्त सम्वत प्रचलित हुआ था। इसका अंग्रेजी अनुवाद ठीक यही भाव प्रकट करता था किंतु फ्लीट के मन्तवय को यह अनुवाद पूरा नहीं करता था। अतः उसने बार–बार एक–एक शब्द का अनुवाद करवाया। उसे वही अनुवाद चाहिए था जो उसके उद्देश्य की पूर्ती कर सके।

पाठ परिवर्तन – पं. कोटावेंकटचलम के अनुसार सुधाकर द्विवेदी ने आर्य भट्ट के ग्रंथ 'आर्यभट्टम' के पद मे छापते समय टी.एस. नारायण स्वामी के मना करने पर भी पाठ में परिवर्तन कर दिया, जो कि अवाच्छित था। प्रक्षिप्त अंश जोड़ना – पार्जिटर तो स्व रचित एक पद पुराणों में घुसाना चाहते थे।

पाठ विलुप्त करना – वेबर ने 1855 ई. में 'शतपथ ब्राह्मण' का भाश्य, जिसके साथ हरिस्वामी का भाश्य और द्विवेद का गंगा भाश्य भी था, वर्लिन से प्रकाशित करवाया था किंतु उसमें वे श्लोक विलुप्त हैं जिनमें विक्रमादित्य की प्रशंसा की गई है जबकि वैंकटेश्वर प्रेस, बम्बई द्वारा 1940 ई. में प्रकाशित इसी भाश्य में वे श्लोक विद्यमान हैं। यह पाठ जानबूझ कर विलुप्त कराए गए हैं क्योंकि विक्रमादित्य को भारत के इतिहास में नहीं दिखाना था।

इस तरह प्राचीन राजाओं और राजवंशों की संख्याओं और राज्यकालों के ब्योरों में बहुत अधिक मात्रा में गड़बड़ियां की हुई हैं। जो पुरातात्विक सामग्रियां पाश्चात्यों की अवधारणाओं के विपरित जा रहीं थी उनको इन्होंने अप्रमाणिक करार दे दिया। इनमें बहुत से अभिलेख व सिक्के हैं। जैसे– खारवेल के हाथी गुम्फा लेख, जनमेजय और राजा शतधन्वा के ताम्रपत्र, तोरमण और सिकन्दर–पुरु के युद्ध सम्बधित सिक्के। वहीं बहुत से अप्रमाणिक अभिलेखों को जबरदस्ती प्रामाणिक सिद्ध करने का प्रयास किया गया, यथा मंदसौर अभिलेख सं. 164 व 165, जो यशोधर्मन नाम के सम्राट से सम्बधित बताए गए हैं। यह सम्राट भारत के इतिहास में आंधी की तरह आया और तूफान की तरह चला गया। न तो इसके माता–पिता का पता और न ही इसकी किसी संतान का काई विवरण मिलता है।

प्राचीन सम्वतों में से युधिष्ठिर, कलि, सप्तर्शि और शूद्रक सम्वतों को पाश्चात्य इतिहासकारों ने पूरी तरह से नकार दिया और उन्हें महत्त्वहीन और अप्रमाणिक सिद्ध करने के लिए उनमें तरह–तरह की गड़बड़ियां भी कीं। इन गड़बड़ियों से भारतीय कालगणना में बड़ी मात्रा में बिगाड़ आ गया है। ।

भारतीय इतिहास को अपने ढ़ंग से लिखने और लिखवाने के लिए पाश्चात्य विद्वानों नें भारतीय एतिहासिक सामग्री में जान–बूझकर भ्रांतियां पैदा की, उनके कुछ उद्धरण हम देख सकतें हैं –

1. आर्य लोग भारत से बाहर से आए थे।
2. आर्यों ने भारत के मूल निवासियों को युद्धों में हराकर दास बना लिया।
3. भारत के मूल निवासी द्रविड़ थे।
4. दासों को आर्यों ने अनार्य बनाकर शूद्र की कोटी में डाल दिया।
5. यूरोपवासी आर्य वंशी है।
6. वेदों का संकलन 1500 से 1200 ई.पू. की अवधी में हुआ।
7. सरस्वती नदी केवल भावनात्मक प्रतीक रही है।
8. भारत मे एतिहासिक सामग्री का अभाव है।
9. भारतीयों के पास इतिहास लिखने के लिए निश्चित तिथिक्रम नहीं है।
10. रामायण, महाभारत और पुराण आदि वैदिक ग्रंथ मिथ हैं।
11. भारत का वास्तुविक इतिहास सिंकदर के आक्रमण के पश्चात आरम्भ होता है।
12. सिकंदर के आक्रमण के बाद 320 ई. में सेंड्रोकोट्टस (चन्द्रगुप्त मोर्य) भारत का सम्राट बना।

13. युनानियों द्वारा वर्णित सेंड्रोकोट्टस चन्द्रगुप्त मौर्य और पालीबोथ्रा पाटलीपुत्र था।
14. गौतम बुद्ध 563 ई.पू. में पैदा हुआ।
15. कुमारिल भट्ट ईसा की 8वीं शताब्दी में पैदा हुए।
16. आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य 788ई. में अवतरित हुए।
17. अशोक 265 ई.पू. में गद्दी पर बैठा।
18. कनिश्क का राज्यारोहण 78 ई. में हुआ।
19. विक्रमी सम्वत् के प्रवर्तक उज्जैन के राजा विक्रमादित्य का कोई ऐतिहासिक अस्तित्व नहीं था।
20. भारत का शासन समग्र रूप में एक केन्द्रीय सत्ता के अर्न्तगत केवल अंग्रेजों के शासनकाल में आया, उससे पूर्व वह कभी भी एक राष्ट्र के रूप में नहीं रहा आदि....आदि।

इस प्रकार हम पाते हैं कि ब्रिटिश राजकाल के दौरान पाश्चात्य इतिहासकारों ने किस प्रकार भारत के इतिहास के मूलआधारों यथा–साहित्य, संस्कृति, भाषा, धर्म, मान्यताओं, परम्पराओं आदि को ऐसा हेय रूप प्रदान किया कि उसके प्रति समाज में अनादर, अनास्था और असम्मान की भावना भर दी। उन्होंने ऐसा वातावरण तैयार किया कि ये सब हमें अत्यन्त तिरस्कृत, निन्दनीय और अविश्वसनीय लगने लगे। उनका मुख्य लक्ष्य भारतीय ज्ञान गंगा को पथ–भ्रष्ट करके उसे अप्रमाणिक और महत्त्वहीन सिद्ध करने का रहा ताकि हमारे देश के तथाकथित पढ़े–लिखे व्यक्ति दिग्भ्रमित हो जाएं। इसका लाभ उन्हें मिल भी रहा है। आज इतिहास का शोधकर्ता अपने विषय की चर्चा में यह तो बता देता है कि मैक्समूलर ने क्या कहा, विल्सन ने क्या कहा, विंटर्निट्स और रेप्सन ने क्या–क्या कहा है, लेकिन वह यह नहीं बता सकता कि वाल्मीकि, व्यास, पतंजली, चाणक्य आदि भारतीय विद्वानों ने क्या कहा है? कहने का अभिप्राय यह है कि आज की शिक्षा के माध्यम से शिक्षित भारतीय अपने प्राचीन इतिहास, साहित्य और गौरव के प्रति ही नहीं अपनी श्रेष्ठतम जीवन–पद्धति और गौरवपूर्ण विचारधारा के प्रति भी आस्थाविहीन हो गए हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

मिल, भारत का इतिहास, खण्ड 4 पृश्ठ 332 – स्वामी विद्यानंद सरस्वती कृत 'आर्यों का आदि देश और उनकी सभ्यता' पृष्ठ 9 पर उद्धृत।

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत का आधुनिक इतिहास–लेखन : एक प्रवंचना, बाबा साहब आप्टे समिति,दिल्ली, पृष्ठ 5.

डॉ. राधाकृश्णन, आर्यों का आदि देश और उनकी सभ्यता, पृष्ठ 28.

डॉ. लीना रस्तोगी, विश्वव्यापिनि संस्कृति, पृश्ठ 90.

पं. भगवद्दत्त, भारतवर्ष का बृहद इतिहास, भाग 1, पृष्ठ 41.

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत का आधुनिक इतिहास–लेखन : एक प्रवंचना, बाबा साहब आप्टे समिति,दिल्ली, पृष्ठ 42.

पं. भगवद्दत्त, भारतवर्ष का बृहद इतिहास, भाग 1, पृष्ठ 27,28.

भजनसिंह, आर्यों का आदि निवास–मध्य हिमालय, पृष्ठ 19.

पं. कोटावेंकटचलम, दा प्लाट इन इण्डियन क्रोनोलोजी, पृष्ठ 76. व रघुनन्दन प्रसाद शर्मा द्वारा अपनी पुस्तक भारत का आधुनिक इतिहास लेखन : एक प्रवंचना में उद्धृत.

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत का आधुनिक इतिहास लेखन : एक प्रवंचना, पृष्ठ 61.64.

सियाराम सक्सैना, भारतीय इतिहास पर दासता की कालिमा, पृष्ठ 38 पर व रघुनन्दन प्रसाद शर्मा द्वारा अपनी पुस्तक भारत का आधुनिक इतिहास लेखन : एक प्रवंचना में उद्धृत, पृष्ठ 201–216.

पं. कोटावेंकटचलम कृत 'क्रोनोलोजी ऑफ कश्मीर हिस्ट्री रिकन्सट्रक्टेड' पृष्ठ 203–208.

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत के इतिहास में विकृतियां : क्यों, कैसे और क्या–क्या?पृष्ठ 33.

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत का आधुनिक इतिहास लेखन : एक प्रवंचना, पृष्ठ 237–250.

रघुनन्दन प्रसाद शर्मा, भारत का आधुनिक इतिहास लेखन : एक प्रवंचना, पृष्ठ 268–269.